

मेससेर्स पीको एलेक्ट्रॉनिक्स और एलेक्ट्रिकल्स और अन्य

बनाम

भारत का संघ और अन्य.

9 मार्च, 2004

[पी. वेंकटरामा रेड्डी और एस. एच. कपाडिया, जे. जे.]

एकाधिकार और प्रतिबंधात्मक व्यापार व्यवहार अधिनियम, 1969;

एस. एस. 2 (0)(ii), 10, 33, 37 और 38:

विक्रेता समझौता- समझौते की शर्तों के अनुसार प्रदर्शन नहीं करने के आधार पर समझौते के अनुसार शिकायत आयोग ने यह अभिनिर्धारित किया कि कंपनी सार्वजनिक हित के लिए प्रतिकूल कुछ प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं में लिप्त थी-कंपनी को माल की आपूर्ति जारी रखने और डीलरशिप समझौते के उल्लंघनकारी खंड में संशोधन करने के लिए उपाय करने का निर्देश दिया-अपील पर अभिनिर्धारित किया गया: माल के निपटान के लिए एक क्षेत्र/बाजार का आवंटन प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा के समान है- कुछ क्षेत्र में एक व्यापारी को उत्पादों को बेचने के लिए प्रतिबंधित करना, वहीं दूसरे विक्रेता को अनुमति देना भेदभावपूर्ण व्यवहार है- कंपनी इस तरह के प्रतिबंध नहीं लगा सकती थी- हालाँकि, भेदभावपूर्ण व्यवहार के मुद्दे पर किसी भी निष्कर्ष के अभाव में, अन्य विक्रेता के

खिलाफ अनुकूल व्यवहार के आरोप साबित नहीं हुए। प्रतिबंधात्मक व्यापार व्यवहार धारा 2(0)(ii) और धारा 33(1)-के दायरे का वर्णन किया गया।

डीलरशिप समझौता-खंड 7 की वैधता रोकता हैं। निर्धारण:-चूंकि निर्माता जानबूझकर या मनमाने ढंग से माल की आपूर्ति रोकता हैं और फिर भी अपने दायित्व को अस्वीकार कर सकता हैं। यह अपने आप में प्रतिबंधात्मक व्यापार अभ्यास है।

आयोग का क्षेत्राधिकार निर्धारण:- आयोग द्वारा किसी सूचना या स्वतः किसी भी प्रतिबंधात्मक/एकाधिकारवादी व्यापार प्रथा की जांच करने की शक्ति विहित हैं। किसी विवादक को तैयार करने, किसी कार्यवाही को दर्ज करने में स्वतः चूक करना निष्कर्ष दूषित नहीं होता, हालांकि प्रभावित पक्ष को पर्याप्त अवसर दिया जाना चाहिए था। न्यायालय को प्रक्रियात्मक पहलुओं पर आयोग द्वारा की गई कार्रवाइयों की वैधता का परीक्षण करते समय एक संकीर्ण दृष्टिकोण से बचना चाहिए और उस दृष्टिकोण को अपनाना चाहिए जो अधिनियम के उद्देश्य के अनुरूप हो आयोग एक दीवानी न्यायालय की भूमिका नहीं ले सकता है इस निष्कर्ष के अभाव में कि समझौते की समाप्ति कैसे प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा को स्वयं में किसी भी व्यापार प्रथा को उद्भूत करती है आयोग के अनुबंध को पुनर्जीवित करके और अनुबंध की आपूर्ति को फिर से शुरू करके अपनी शक्तियों से परे नहीं जाना चाहिए था।

इस हद तक, आयोग के निर्देश की वैद्यत स्वीकार्य नहीं है।

अपीलार्थी-ऑडियो उत्पादों का निर्माण करने वाली कंपनी, जिसका एक विक्रेता लंबे समय से था और बाद में कुछ नियमों और शर्तों पर एक अन्य विक्रेता, प्रतिवादी संख्या 2 को नियुक्त किया गया। बाद में, कंपनी ने प्रतिवादी संख्या 2 को एक नोटिस देने के पश्चात् समझौते के खंड 29 के अनुसार प्रतिवादी संख्या 2 की डीलरशिप को समाप्त कर दिया। प्रत्यर्थी-विक्रेता ने आयोग के समक्ष शिकायत दर्ज कराई कि कंपनी द्वारा कुछ प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं का पालन किया जा रहा है। आयोग ने एक जांच की, कंपनी के खिलाफ प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं के पांच आरोप बनाए और यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलार्थी सार्वजनिक हित के लिए प्रतिकूल कुछ प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं में लिप्त था; कि समझौते का खंड 7 स्वयं प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा के बराबर था और डीलरशिप समझौते के खंड में संशोधन करने और प्रतिवादी संख्या 2 की डीलरशिप को समाप्त नहीं करने का निर्देश दिया। अतः वर्तमान अपील प्रस्तुत की गई।

अपीलार्थी-कंपनी की ओर से यह तर्क दिया गया था कि आयोग द्वारा अभिलेख पर साक्ष्य की परवाह किए बिना, मनमाने ढंग से निष्कर्ष देने के कारण इसके निष्कर्ष विकृत हैं; कि आयोग ने डीलरशिप की बहाली और समझौते के खंड 7 को हटाने का निर्देश देकर अपने क्षेत्राधिकार का

उल्लंघन किया हैं और यह कि यह कंपनी के खिलाफ संघर्ष विराम आदेश पारित करने के दौरान इस प्रभाव का निष्कर्ष देने में विफल रहा कि कथित व्यापार प्रथा सार्वजनिक हित के लिए प्रतिकूल था,

न्यायालय ने अपील का निस्तारण करते हुए, अभिनिर्धारित किया।

1.1 धारा 33, जो एकाधिकार और प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा अधिनियम के खंड (छ) के साथ पढ़ा जाने पर माल के निपटान के लिए किसी भी क्षेत्र या बाजार को आवंटित करने के लिए एक समझौते को प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा से संबंधित एक समझौता माना जाता हैं क्योंकि माल के निपटान के लिए विशेष क्षेत्र या बाजार का आवंटन कंपनी अपने डीलरों के साथ लेनदेन के दौरान इस तरह के प्रतिबंध नहीं लगा सकती थी तथा प्रतिस्पर्धा में बाधा डालने या प्रतिबंधित करने की संभावना होती हैं।

1.2 कंपनी के खिलाफ भेदभाव का आरोप आयोग द्वारा केवल इस आधार पर स्थापित किया गया कि दूसरे विक्रेता को कंपनी के उत्पादों को बाजार से बेचने की स्वतंत्रता दी गई थी, लेकिन शिकायतकर्ता, अन्य विक्रेता को कंपनी के उत्पादों को उसी बाजार में बेचने की अनुमति नहीं थी। इसके परिणामस्वरूप शिकायतकर्ता के खिलाफ भेदभावपूर्ण व्यवहार हुआ है, जो अधिनियम की धारा 2(0)(ii) को आकर्षित करता है। इस हद तक कि क्षेत्र प्रतिबंध शिकायतकर्ता पर लगाया गया था, लेकिन अन्य विक्रेता पर नहीं।

यह भेदभाव का एक उदाहरण होगा और इस हद तक आयोग के निष्कर्ष को गलत नहीं ठहराया जा सकता है। हालाँकि, आयोग ने इस आरोप के संदर्भ में कोई निष्कर्ष दर्ज नहीं किया कि माल की आपूर्ति के मामले में भेदभाव था। फिर भी, आयोग इस आधार पर आगे बढ़ा कि आरोप पूरी तरह से साबित हो गया। चाहे जो भी हो, इस आरोप को बनाए रखने में एक बड़ी कठिनाई है। आयोग ने माना कि भेदभाव का कार्य एक प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा है।

अधिनियम की धारा 2(0)(ii) के अर्थ के अनुसार धारा 2(0)(ii) के महत्वपूर्ण अवयवों में से किसी एक के संबंध में कोई निष्कर्ष नहीं है। इसके अलावा, साक्ष्य में ऐसा कुछ भी नहीं पाया गया जिससे आयोग इस प्रश्न के निष्कर्ष पर पहुँच सके कि क्या अपीलार्थी का शिकायतकर्ता को उसी बाजार में अपनी दुकान से बिक्री करने से मना करने के कृत्य के परिणामस्वरूप या इसके संभाव्य परिणामस्वरूप उपभोक्ताओं पर अनुचित बोझ पड़ने की संभावना थी। इसलिए, आयोग का यह निष्कर्ष कि अन्य विक्रेता को अनुकूल व्यवहार देकर, अपीलार्थी ने प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा का सहारा लिया जो धारा 2(0)(ii) के अर्थानुसार कानूनी रूप से गलत था।

हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड बनाम महानिदेशक (जांच और पंजीकरण) व अन्य। [2001] 2 एस. सी. सी. 474, का अवलंब लिया गया।

2.1 आयोग ने ठीक ही अभिनिर्धारित किया कि समझौते के खंड 7 के अपने वर्तमान रूप में, एक प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा लाने की क्षमता है और इसलिए इसमें संशोधन किया जाना चाहिए। उक्त खंड का आपूर्तिकर्ता के पक्ष में भार अधिक है। खंड के उत्तरार्द्ध भाग के तहत आपूर्ति जताते हुए, आपूर्तिकर्ता बिना कोई कारण बताए माल की आपूर्ति को मनमाने ढंग से रोक सकता है या देरी कर सकता है और फिर भी अपनी मनमाने ढंग से की गई कार्रवाई से उत्पन्न अपनी जिम्मेदारी या दायित्व को मनमाने ढंग से अस्वीकार कर सकता है। अतः आयोग का यह मानना उचित था कि यह अपने आप में एक प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा थी। किसी भी माल के उत्पादन या आपूर्ति को सीमित करने, प्रतिबंधित करने या रोकने का समझौता अधिनियम की धारा 33(1) के खंड (जी) की शरारत के दायरे में आता है और इसलिए इसे प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा से संबंधित समझौता माना जाना चाहिए।

अधिनियम की धारा 33(1) के अध्यादेश के अनुसार

वोल्टास लिमिटेड, बॉम्बे बनाम भारत संघ व अन्य। [1995] पूरक।
2 एस. सी. सी. 498, का अवलंब लिया गया।

2.2 आयोग को अपने स्वयं के ज्ञान या जानकारी पर किसी भी प्रतिबंधात्मक या एकाधिकारवादी व्यापार प्रथा के किसी भी मामले की जांच करने तथा आवश्यक अनुवर्ती कार्रवाई करने की शक्ति प्रदान की गई हैं।

आयोग अपने कर्तव्य में विफल रहेगा यदि वह प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं पर ध्यान नहीं देता है जो किसी शिकायत की जाँच के दौरान ज्ञान में आता है। परन्तु, किसी विवादक की रचना औपचारिक कार्यवाही को दर्ज करने या स्वतः विचार के लिए बिंदु में चूक, स्वयं आयोग के निर्णय को दूषित नहीं करता है। यह इस तरह की शक्ति के प्रयोग में निहित है कि प्रभावित पक्ष को उस बिंदु को पुष्ट करने का पर्याप्त अवसर दिया जाना चाहिए, जो यह स्वतः संज्ञान जांच का विषय है। प्रक्रियात्मक दृष्टिकोण से आयोग द्वारा की गई कार्रवाई की वैधता का परीक्षण करने में, न्यायालय का दृष्टिकोण ऐसा होना चाहिए कि अधिनियम के उद्देश्यों को बढ़ावा दिया जा सके। एक संकीर्ण या पांडित्यपूर्ण दृष्टिकोण को त्याग दिया जाना चाहिए।

इस दृष्टिकोण से, यह नहीं माना जा सकता है कि आयोग ने खंड 7 की वैधता का परीक्षण करने में अपनी सीमा के भीतर कार्य नहीं किया और अपीलार्थी खंड से संबंधित आरोप का निर्धारण न करने के कारण अपने मामले को पूरा करने में बाधित था। अतः आयोग द्वारा धारा 37(1) के खंड (बी) के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए निर्देश दिया कि खंड में उपयुक्त संशोधन किया जाना चाहिए ताकि इसमें आपत्तिजनक तत्व को हटाया जा सके।

2.3 अपीलार्थी-कंपनी को बाधित करने वाला आयोग का निर्देश- जहाँ तक वर्तमान समझौते का संबंध है, शिकायतकर्ता के डीलरशिप की समाप्ति के पत्र पर और माल की आपूर्ति जारी रखने के संबंध में लागू नहीं किया जा सकता है। साथ ही, कंपनी को मानक फॉर्म समझौते का खंड में निहित अनुचित व्यापार प्रथा को कायम रखने की अनुमति नहीं दी जाएगी। इसलिए, आयोग के आदेश में यह संशोधन कर निर्देश देना उचित होगा कि कंपनी को अपने विक्रेताओं के साथ सभी समझौतों में जहां भी ऐसा होता है, खंड या समान खंड में उपयुक्त संशोधन करके प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा को समाप्त करने के लिए कदम उठाने चाहिए।

2.4 सामान्यतः आयोग को समझौते के एक या दूसरे खंड के अधीन समझौते की वैद्यता के संबंध में जांच करने का अधिकार नहीं है। आयोग इस संबंध में दीवानी न्यायालय की भूमिका नहीं निभा सकता है। यह सच है कि आयोग के पास इस बात पर विचार करने की आनुषंगिक और सहायक शक्ति है कि क्या डीलरशिप आपत्तिजनक व्यापार प्रथाओं को कायम रखने का एक साधन था और क्या इस तरह की समाप्ति प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा की निरंतरता के साथ निकटता से जुड़ी हुई है। आयोग ने यह नहीं माना कि खंड 29 के तहत समाप्ति स्वयं प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं को जन्म देगी या कि खंड 29 के तहत समाप्ति प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं के साथ आगे बढ़ने के लिए खंड 28

को दरकिनार करने के लिए एक कवच है। वास्तव में आयोग के कुछ निष्कर्षों से संकेत मिलता है कि कुछ विक्रेता द्वारा व्यवसाय करने के तरीके से असंतुष्ट महसूस करने का औचित्य है।

एक तथ्य यह भी है कि कई पत्र जो वह कथित कंपनी के अनुचित और भेदभावपूर्ण प्रथा के खिलाफ विरोध करते हुए अपीलकर्ता कंपनी को लिख रहे थे। उक्त कंपनी से कोई प्रतिक्रिया प्राप्त नहीं हुई। इस बात का कोई कारण नहीं दिया गया है कि समझौते के तहत आरक्षित अधिकार का प्रयोग करते हुए जिस अनुबंध को समाप्त कर दिया गया था, उसे क्यों पुनर्जीवित किया जाना चाहिए। जाहिर है, इस तरह के निर्देश को शिकायतकर्ता के नुकसान की भरपाई करने के लिए नहीं माना जा सकता है। जहां तक नुकसान के मुआवजे का संबंध है, आयोग के लिए उस आवेदन पर उपयुक्त आदेश पारित करना स्वीकार है; लेकिन, समाप्ति पत्र को प्रभावी नहीं करने का निर्देश, जिससे अनुबंध को पुनर्जीवित किया जा सके, स्पष्ट रूप से आयोग की शक्तियों से परे है, विशेष रूप से इस कारण से कि आयोग ने यह निष्कर्ष दर्ज नहीं किया कि अनुबंध की समाप्ति अधिनियम के प्रावधानों के तहत थी और केवल प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं को बनाए रखने के लिए इसका सहारा लिया गया था। नतीजतन, उत्पादों की आपूर्ति को फिर से शुरू करने का निर्देश समान रूप से अस्थिर है।

3. प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा को बंद करने का आदेश क्षेत्र प्रतिबंध से संबंधित शुल्क इस निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए अनुचित हो जाता है कि जिस विक्रेता समझौते को समाप्त कर दिया गया है, उसे इस स्तर पर पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता है। अतः यह प्रश्न कि क्या खंड 37(1)(ए) के तहत संघर्ष विराम आदेश अपीलार्थी के खिलाफ आयोजित प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा के संबंध में पारित किया जा सकता है, अकादमिक बन जाता है।

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णय: सिविल अपील सं. 7079/1996.

नई दिल्ली में आयोग, M-R-T-P के R-T-P-E 1616/1987 में पारित निर्णय और आदेश दिनांकित 22.11.95 से।

अपीलार्थियों के लिए जय सावला। जे. एम. मुखी, सुश्री शाकुंभरी सिंह, एम. के. गर्ग, तुफैल ए. खान, उत्तरदाताओं के लिए राजीव नंदा और पी. परमेश्वरन।

न्यायालय का निर्णय पी. वेंकटरामा रेड्डी, जे. के द्वारा पारित किया गया था।

यह अपील एकाधिकार एवं प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा अधिनियम, 1969 (अधिनियम के रूप में संदर्भित हैं) की धारा 55 के अधीन आयोग M-R-T-P जांच नं. 1616 की 1987 के आदेश के विरुद्ध प्रस्तुत की गई।

आयोग ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि अपीलार्थी सार्वजनिक हित के लिए प्रतिकूल कुछ प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं में लिप्त था, अपीलार्थी को भविष्य में ऐसी प्रथाओं में लिप्त होने से बचने और डीलरशिप समझौते में उल्लंघनकारी खंड में संशोधन करने का निर्देश दिया। आयोग ने अपीलार्थी को आगे निर्देश दिया कि वह शिकायतकर्ता (इसमें दूसरा प्रतिवादी) की डीलरशिप की समाप्ति को प्रभावी न बनाए और शिकायतकर्ता द्वारा आवश्यक आदेश दिए जाने के अधीन “कम से कम वर्ष 1986 में की गई आपूर्ति की सीमा तक” फिलिप्स उत्पादों की आपूर्ति सुनिश्चित करे।

शिकायत दर्ज करने की वास्तविक पृष्ठभूमि निम्नलिखित है:-

अपीलार्थी कंपनी कुछ ऑडियो उत्पादों का निर्माण और बिक्री करती है। इसके पास देश भर में लगभग 1800 डीलरों का एक विशाल नेटवर्क है जो प्रधान से प्रधान आधार पर नियुक्त हैं। ग्वालियर में, अपीलार्थी का मेसर्स एवरग्रीन नाम का एक डीलर था। जो सराफा बाजार में अपनी दुकान से लंबे समय से काम कर रहा है। वर्ष 1985 में, अपीलार्थी ने दूसरे प्रतिवादी (जिसे इसके बाद ‘आर-2’ या ‘शिकायतकर्ता’ के रूप में संदर्भित किया गया है) को एक अन्य विक्रेता के रूप में नियुक्त किया, जिसका ग्वालियर में व्यवसाय का स्थान था। 15.11.1985 दिनांकित एक समझौता, जो विवाद में नहीं है, मानक रूप में किया गया था। समझौते

का खंड 29 के अनुसार किसी भी पक्ष द्वारा अन्य 30 दिनों के नोटिस को लिखित रूप में देकर समझौते को समाप्त किया जा सकता था। इस खंड के संदर्भ में, अपीलार्थी ने दिनांक 23.9.1987 के अपने नोटिस द्वारा आर-2 को 30 दिनों का नोटिस दिया व नोटिस अवधि समाप्त होने पर डीलरशिप को समाप्त कर दिया। अपीलार्थी के अनुसार, ऐसा कदम इसलिए उठाया गया था क्योंकि वह आर-2 के प्रदर्शन से संतुष्ट नहीं था। आर-2 ने तब आयोग के समक्ष शिकायत दर्ज कराई। शिकायतकर्ता ने आरोप लगाया कि अपीलकर्ता शिकायतकर्ता द्वारा संबोधित कुछ पत्रों से व्यथित महसूस करता है जो वरीयता की ओर इशारा करते हैं। पुराने विक्रेता मेसर्स एवरग्रीन को अनुतोष आर-2 के नुकसान की ओर इशारा करता है। शिकायत में प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं के कुछ उदाहरण गिने गए थे। शिकायतकर्ता ने संघर्ष विराम आदेश जारी करने और डीलरशिप को बहाल करने और फिलिप्स उत्पादों की आपूर्ति फिर से शुरू करने के निर्देश के लिए प्रार्थना की। आयोग ने जांच करने का फैसला किया। तदनुसार, अपीलार्थी को 21.1.1988 पर जांच का नोटिस भेजा गया था। उक्त सूचना में, अपीलार्थी द्वारा कथित रूप से की गई पांच प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं का उल्लेख किया गया था। वे इस प्रकार हैं:

(i) प्रत्यर्थियों ने शिकायतकर्ता को प्रतियोगियों के समान प्रकार के उत्पादों का लेनदेन करने या बेचने से मना किया जो धारा 33(1)(सी) के अर्थानुसार प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा है।

(ii) उत्तरदाताओं ने शिकायतकर्ता की मांग की परवाह किए बिना उसे सभी प्रकार के सामानों की आपूर्ति की। उदाहरण के लिए 31 दिसंबर, 1985 को शिकायतकर्ता को 252 पी. सी. इन्फ्रा लैंप की आपूर्ति की गई थी, भले ही शिकायतकर्ता ने उनके लिए कोई मांग नहीं की थी। इस प्रकार प्रतिवादी अवांछित वस्तुओं को पूरी तरह से श्रृंखला आरोपण करने/फेंकने और वांछित और आदेशित वस्तुओं की आपूर्ति को रोक कर देरी करने के व्यापार प्रथा में है। यह अधिनियम की धारा 2(0) और धारा 33(1)(बी) के अर्थानुसार एक प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा है। एम. आर. टी. पी. अधिनियम की धारा 339(1)(बी) के अर्थानुसार एक प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा है।

(iii) शिकायतकर्ता को एक विशेष क्षेत्र आवंटित किया गया था जिसमें उसकी डीलरशिप सीमित थी। किसी क्षेत्र को आवंटित करने की प्रथा एम. आर. टी. पी. अधिनियम की धारा 33(1)(जी) के अर्थानुसार प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा है।

(iv) प्रतिवादी ने शिकायतकर्ता को अपने ग्राहकों को कम कीमतों पर बेचने की स्वतंत्रता दिए बिना उन कीमतों को तय किया जिन पर उनके

उत्पादों को बेचा जाना था। यह प्रथा एम. आर. टी. पी. अधिनियम की धारा 33(1)(एफ) के अर्थानुसार एक प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा है।

(v) प्रत्यर्थी ने शिकायतकर्ता के साथ भेदभाव किया और अपने दूसरे विक्रेता एवरग्रीन, सराफा बाजार, ग्वालियर के साथ फिलिप उत्पादों की आपूर्ति करने में पक्षपातपूर्ण व्यवहार किया। यह प्रथा एम. आर. टी. पी. अधिनियम की धारा 2(0)(ii) के अर्थानुसार एक प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा है।

ऐसा प्रतीत होता है कि जांच के लंबित रहने के दौरान आयोग ने अंतरिम निषेधाज्ञा का आदेश जारी किया। हालांकि, अपीलार्थी द्वारा दायर एक रिट याचिका पर बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा उक्त आदेश को स्थगन किया गया।

अपीलार्थी ने आरोपों से इनकार करते हुए यह तर्क दिया कि शिकायतकर्ता व्यवसाय को ठीक से नहीं चला रहा था क्योंकि जनवरी, 1987 से सितंबर, 1987 की अवधि के दौरान बिक्री में काफी गिरावट आई थी, कि शिकायतकर्ता ने एक से अधिक अवसरों पर दस्तावेजों की निवृत्ति में देरी की तथा एक चेक भी जारी किया जिसका बैंक द्वारा अनादरण किया गया था। अपीलार्थी ने दलील दी कि समझौते के खंड 29 के तहत उसके लिए आरक्षित शक्ति का प्रामाणिक उपयोग उसके व्यावसायिक हित में किया गया था। आयोग ने यह निष्कर्ष दिया कि आरोप 3 और 5

(उपरोक्त) साबित हुए और अन्य आरोप साबित नहीं हुए। हालांकि, आरोप संख्या 2 पर विवेचन करते हुए आयोग ने कहा कि अवांछित उत्पादों को फेंकने का आरोप साबित नहीं हुआ है और शिकायतकर्ता के द्वारा मांग के अनुसार आपूर्ति भेजने से इनकार व्यापारी की ओर से व्यतिक्रम को ध्यान में रखते हुए काफी उचित था, जिसमें यह आदेश जारी किया गया कि समझौते का खंड 7 स्वयं में प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा के बराबर है और इसलिए प्रतिवादी इसे शुद्ध करने के लिए कार्रवाई करेगा।

न्यायाधिकरण ने अपने निष्कर्षों को दर्ज किया कि प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाएं आर-2 द्वारा शामिल किए जाने से प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देने पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा, कि धारा 38(1) के खंड (एच) के संदर्भ में उनके द्वारा जिस रास्ते का अनुरोध किया गया उससे कोई संबल प्रदान नहीं होता और यह कि विचाराधीन प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाएं अपने आप में लोक हित के लिए हानिकारक थीं।

अब हम अपीलार्थी की ओर से विद्वान वकील द्वारा दिए गए तर्कों का उल्लेख कर सकते हैं।

(1) आरोप (iii) व (v) के संदर्भ में आयोग के निष्कर्ष कानूनी रूप से असमर्थनीय हैं, क्योंकि आयोग अभिलेख पर साक्ष्य को ध्यान में रखे बिना मनमाने ढंग से निष्कर्षों पर पहुंचा है। अतः निष्कर्ष विकृत हैं।

(2) आयोग ने खंड 7 को हटाने का निर्देश देने में अपने क्षेत्राधिकार का और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन किया है। समझौते के खंडों की वैधता पर आयोग द्वारा तब बिल्कुल भी विचार नहीं किया जाना चाहिए, जब समझौता स्वयं ही समाप्त हो गया था।

(3) डीलरशिप और आपूर्ति को बहाल करने का निर्देश आयोग की शक्तियों के दायरे से परे है।

(4) 'विराम और निषेध' आदेश पारित करने से पहले आयोग यह निष्कर्ष देने में विफल रहा कि कथित प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा सार्वजनिक हित के लिए प्रतिकूल है। री: तर्क संख्या 1 आरोप (iii) और (v), हम पहले अपीलकर्ता के विद्वान वकील के इस तर्क पर विचार करेंगे कि आरोप (iii) और (v) के संबंध में आयोग द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष आधारहीन हैं और अभिलेख पर साक्ष्य द्वारा असमर्थित हैं।

आरोप सं. (iii) के संदर्भ में, हम देख सकते हैं कि खंड 27 के तहत समझौते के अनुसार, विक्रेता भारत के किसी भी हिस्से के ग्राहकों को सामान बेचने के लिए स्वतंत्र होगा। जैसा कि आयोग द्वारा विवेचन किया गया है, उक्त खंड अपने आप में 'न तो क्षेत्रीय स्वतंत्रता देता है और न ही कोई क्षेत्रीय प्रतिबंध लगाता है'।

किन्तु, आयोग ने साक्ष्य का विवेचन करने के बाद यह निष्कर्ष दिया कि 'तीसरा आरोप धारा 33(1)(जी) के संदर्भ में साबित हुआ है।' धारा

33(1)(जी) किसी भी वस्तु के उत्पादन या आपूर्ति को सीमित करने, प्रतिबंधित करने या रोकने या माल के निपटान के लिए किसी भी क्षेत्र या बाजार को आवंटित करने के लिए एक समझौते की बात करती है।

धारा 33(1) के खंड (जी) द्वारा परिकल्पित प्रकार का समझौते में कोई प्रतिबंध नहीं है परन्तु साक्ष्य द्वारा समर्थित एक स्पष्ट निष्कर्ष है कि शिकायतकर्ता पर उसकी सराफा बाजार की दुकान से उत्पाद बेचने पर प्रतिबंध लगा कर प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा का सहारा लिया है। इस संदर्भ में, शिकायतकर्ता के गवाह के शपथ पत्र और शिकायतकर्ता द्वारा बार-बार लिखे गए संबोधित पत्रों को आयोग द्वारा उल्लेख किया गया है। आयोग ने इस तथ्य पर ध्यान दिया कि अपीलार्थी ने इन पत्रों का कोई जवाब नहीं भेजा और किसी भी समय शिकायतकर्ता को यह स्पष्ट नहीं किया कि उसे सराफा बाजार परिसर से बेचे जा रहे उत्पादों पर कोई आपत्ति नहीं है। आयोग ने उल्लेख किया कि भले ही शिकायतकर्ता ने कभी-कभी सराफा बाजार से कुछ उत्पाद बेचे हों, लेकिन यह शिकायतकर्ता के मामले को खारिज नहीं करता है कि उसे सराफा बाजार से बेचने की अनुमति नहीं थी, जहां दूसरे विक्रेता का अपना शोरूम था। हम तथ्य के इस निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं कर सकते। यदि ऐसा है, तो अपीलार्थी का कार्य प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा के दायरे में आता है। धारा 33 सपठित खंड (छ) के आधार पर, माल के निस्तारण के लिए किसी भी क्षेत्र या बाजार

को आवंटित करने के समझौते को प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा से संबंधित समझौता माना जाता है। अपीलार्थी यह दलील नहीं ले सकता कि समझौते में ही इस तरह के किसी प्रतिबंध के अभाव में, वह शिकायतकर्ता के साथ व्यापार के दौरान इस तरह के प्रतिबंध लगाने के लिए स्वतंत्र है।

धारा 33(1) के विभिन्न खंडों में निर्धारण इस प्रश्न को तय करने में समान रूप से प्रासंगिक होंगे कि क्या अधिनियम के अर्थानुसार वास्तविक व्यवहार में लगाए गए प्रतिबंध प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं के बराबर हैं। इसी से प्रासंगिक यह प्रकट होता है कि जैसा आयोग द्वारा अभिनिर्धारित किया गया कि माल के निस्तारण के लिए किसी विशेष क्षेत्र या बाजार के आवंटन से प्रतिस्पर्धा में बाधा आने या सीमित होने की संभावना है और उस अर्थ में, धारा 2 के खंड(ओ) में परिभाषा का प्रारंभिक भाग भी आकर्षित हो जाता है। यद्यपि यह प्रतीत होता है कि आरोप संख्या 3 में प्रयुक्त वाक्यांश, 'एक क्षेत्र का आवंटन जिसमें डीलरशिप सीमित थी' अनुचित है, आयोग के निष्कर्ष को मात्र उसी आधार पर अपास्त नहीं किया जा सकता है। आरोप का सार अपीलार्थी द्वारा अच्छी तरह से समझा गया था और शिकायतकर्ता ने तदनुसार अपना बचाव किया।

आरोप सं. (अ) के अनुसार, अपीलार्थी ने दूसरे विक्रेता, मेसर्स एवरग्रीन को फिलिप्स उत्पादों की आपूर्ति करने में पक्षपात किया और इस प्रकार अपीलार्थी ने शिकायतकर्ता के साथ भेदभाव किया। इस आरोप के

संदर्भ में, शिकायतकर्ता द्वारा की गई वास्तविक शिकायत यह है कि मेसर्स एवरग्रीन को तेजी से चलने वाले और लोकप्रिय उत्पादों की आपूर्ति की जा रही थी, जबकि शिकायतकर्ता को ज्यादातर धीमी गति से चलने वाले सामान मिल रहे थे। यह भी आरोप लगाया गया कि मेसर्स एवरग्रीन न केवल ग्वालियर में बल्कि चार अन्य जिलों में भी किसी भी गैर-फिलिप्स उत्पाद विक्रेता को सराफा बाजार में अपने शोरूम से फिलिप्स उत्पादों को बेचने के लिए स्वतंत्र था, जबकि शिकायतकर्ता को भेदभाव का आरोप केवल इस आधार पर लगाया गया था कि मेसर्स एवरग्रीन को सराफा बाजार से अपीलार्थी के उत्पादों को बेचने की स्वतंत्रता दी गई थी, लेकिन शिकायतकर्ता को सराफा बाजार की दुकान से बेचने की अनुमति नहीं थी। आयोग के अनुसार, इसके परिणामस्वरूप शिकायतकर्ता के खिलाफ भेदभावपूर्ण व्यवहार हुआ है, जो अधिनियम की धारा 2(0)(ii) को आकर्षित करता है। यह पुनः इंगित किया जा सकता है कि आयोग ने आरोप संख्या (iii) यानी क्षेत्र प्रतिबंध में विश्लेषण के दौरान यही निष्कर्ष दिया था। इस हद तक कि क्षेत्र प्रतिबंध शिकायतकर्ता पर लगाया गया था, लेकिन मेसर्स एवरग्रीन पर नहीं, यह भेदभाव का एक उदाहरण होगा और इस हद तक आयोग के निष्कर्ष को गलत नहीं ठहराया जा सकता है। हालाँकि, आयोग ने इस आरोप के संदर्भ में कोई निष्कर्ष दर्ज नहीं किया कि माल की आपूर्ति के मामले में भेदभाव था। इसके बारे में एक भी शब्द

नहीं कहा गया है। हम इस विशेष पहलू की ओर इस कारण से इशारा कर रहे हैं कि आयोग द्वारा आरोप संख्या (v) को साबित पाया गया जो व्यापक रूप से सुसंगत है और यह माल की आपूर्ति के संबंध में मेसर्स एवरग्रीन को अनुतोष के साथ पक्षपात करने का उल्लेख करता है। इसके बावजूद मामले के इस पहलू पर आयोग का कोई निष्कर्ष नहीं है। फिर भी, आयोग इस आधार पर आगे बढ़ा कि आरोप पूरी तरह से साबित हो गया। चाहे जो भी हो, इस आरोप को साबित माने जाने में एक बड़ी कठिनाई है। आयोग ने माना कि भेदभाव का कार्य, जैसा कि उसके द्वारा पाया गया है, अधिनियम की धारा 2 (ओ) (ii) के अर्थ के अनुसार एक प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा है। उक्त प्रावधान में कहा गया है:

(0) 'प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा से ऐसा व्यापार प्रथा अभिप्रेत है जिसमें किसी भी तरह से और विशेष रूप से प्रतिस्पर्धा या रोकने, विकृत करने या प्रतिबंधित करने का प्रभाव हो सकता है-

(i) X X X X X

(ii) जो कीमतों या वितरण की शर्तों में हेरफेर ला सकता है तथा वस्तुओं या सेवाओं की आपूर्ति के प्रवाह को संबंधित बाजार में प्रभावित करने के लिए इस तरह से लागू करता है, जो उपभोक्ताओं पर अनुचित लागत या प्रतिबंध लागू करता है। यदि खंड (ii) को लागू करना है, तो एक और निष्कर्ष होना चाहिए कि विवादित व्यापार प्रथा का उपभोक्ताओं पर

अनुचित लागत या प्रतिबंध लगाने का प्रभाव पड़ता है। इसी प्रावधान का निर्माण करते हुए इस न्यायालय द्वारा हिंदुस्तान लीवर लिमिटेड बनाम महानिदेशक (जांच और पंजीकरण) और अन्य। [2001] 2 एस. सी. सी. 474 के मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि:-

"जैसा कि उक्त परिभाषा के पठन मात्र से ही प्रकट होता है और आयोग द्वारा नोटिस जारी करने में भी ठीक से समझा गया है कि "परिभाषा के दो भाग हैं- एक जो ऐसी व्यापार प्रथा को जारी रखने से संबंधित है जिसका किसी भी तरह से प्रतिस्पर्धा को रोकने, विकृत करने या प्रतिबंधित करने का प्रभाव है या हो सकता है और दूसरा, ऐसी व्यापार प्रथा को जारी रखना जिसका अन्य बातों के साथ-साथ उपभोक्ताओं पर अनुचित लागत या प्रतिबंध लगाने का प्रभाव है।" तत्पश्चात् अगले अनुच्छेद में निर्धारित किया गया है -

"..... लेकिन हमें यह देखना है कि क्या अपीलार्थी विक्रेताओं के बीच प्रतिस्पर्धा को रोकने, विकृत करने और प्रतिबंधित करने का दोषी रहा है, जो कि उसके खिलाफ आरोप लगाया गया था। इस तरह के निष्कर्ष के अभाव में अपीलार्थी की किसी भी कार्रवाई का उपभोक्ताओं पर

अनुचित लागत या प्रतिबंध लगाने का प्रभाव पड़ने के संबंध में शब्द मात्र भी नहीं होने से आयोग द्वारा अपीलार्थी के खिलाफ पारित आदेश त्रुटिपूर्ण हैं।

प्रस्तुत मामले में भी स्थिति यही है कि धारा 2(ओ)(ii) के महत्वपूर्ण अवयवों में से किसी एक के संबंध में कोई निष्कर्ष नहीं है। इसके अलावा, हमें सबूतों में ऐसा कुछ भी नहीं मिलता है जिससे आयोग इस प्रश्न पर निष्कर्ष पर पहुँचा हो कि क्या शिकायतकर्ता को सराफा बाजार में अपनी दूसरी दुकान से बिक्री करने से रोकने के अपीलार्थी के कृत्य के परिणामस्वरूप उपभोक्ताओं पर अनुचित बोझ पड़ा था या पड़ने की संभावना थी। इसलिए हमारे मत में आरोप सं. (v) के तहत आयोग का निष्कर्ष कि अपीलार्थी ने धारा 2(ओ)(ii) के अर्थ के अनुसार प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा का सहारा लिया है जो कानूनी रूप से गलत है और अपास्त किये जाने योग्य है।

री: तर्क संख्या 2 (समझौते का खंड 7)

समझौते का खंड 7 इस प्रकार है:

(7) कंपनी इस बात की कोई गारंटी या वचन नहीं देती है कि वह कंपनी के उत्पादों की विक्रेता की आवश्यकताओं को उसके आदेश के अनुसार आपूर्ति करेगी और किसी भी स्थिति में अपनी विफलता या

आपूर्ति देने से इनकार या आपूर्ति को प्रभावित करने में देरी के लिए कोई जिम्मेदारी या दायित्व स्वीकार नहीं कर सकती है, चाहे कारण कोई भी हो।

आयोग के अनुसार, खंड 7, अपने वर्तमान रूप में प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा को बढ़ावा दे सकता है। अतः इसका संशोधन किया जाना चाहिए। हमारा झुकाव इस मामले में आयोग के मत का समर्थन करने की ओर है। खंड 7 का भारी शब्दकोश अपीलकर्ता के पक्ष में झुकता है। खंड 7 के उत्तरार्द्ध भाग के तहत आपत्ति जताते हुए, अपीलार्थी बिना किसी प्रावधान के सामान की आपूर्ति को मनमाने ढंग से रोक सकता है या देरी कर सकता है और फिर भी अपनी मनमानी कार्रवाई से उत्पन्न होने वाली अपनी जिम्मेदारी या दायित्व से इनकार कर सकता है। आयोग का यह मानना उचित है कि यह अपने आप में एक प्रतिबंधात्मक व्यापार अभ्यास है। किसी भी माल के उत्पादन या आपूर्ति को सीमित करने, प्रतिबंधित करने या रोकने का समझौता धारा 33(1) के खंड (जी) की शरारत के दायरे में आता है और इसलिए इसे धारा 33(1) के प्रावधानानुसार प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा से संबंधित समझौता माना जाना चाहिए। जब एक बार यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि समझौते का कोई खंड धारा 33 की उप धारा (1) के खंड (क) से (ठ) के दायरे में आता है, तो यह पता लगाने के लिए आगे की जांच की आवश्यकता नहीं है कि क्या यह धारा 2(ओ) के मापदंडों के दायरे में आता है। वोल्टास लिमिटेड, बॉम्बे

बनाम भारत संघ व अन्य, 1995 पूरक। 2 एससीसी 498 के मामले में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा इस कानूनी स्थिति का निस्तारण किया गया है।

इस न्यायालय ने टिप्पणी की कि धारा 33 की उप-धारा (1) के खंड (क) से (ठ) में सूचीबद्ध व्यापार पद्धतियों को अब वैधानिक रूप से प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं के रूप में निर्धारित और निर्दिष्ट माना जाएगा। अतः यह आग्रह नहीं किया जाना चाहिए कि हालांकि एक विशेष समझौता धारा 33 की उप-धारा (1) के एक या अन्य खंड के दायरे में आता हो, फिर भी उसे ऐसा समझौता नहीं माना जा सकता, जिसमें ऐसी शर्तें हो जो कि अधिनियम के अर्थ के अनुसार प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाएं मानी जा सकती हों।

अतः अब आयोग या उच्च न्यायालय को अधिनियम की धारा 2(ओ) के अर्थानुसार इस प्रकार की व्यापार प्रथाओं के प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा के होने या ना होने के संबंध में निष्कर्ष देने के लिए अधिनियम की धारा 2 (ओ) के आलोक में धारा 33 की उपधारा (1) के खण्ड (क) से (ठ) में उल्लेखित व्यापार प्रथाओं को टेस्ट व परीक्षित करने का अधिकार नहीं है। मात्र ऐसी व्यापार प्रथाओं के संबंध में यह कार्य किया जाना चाहिये, जिनका खंड क से खंड ठ में कोई उल्लेख नहीं किया गया है। केवल इस

तरह की व्यापार प्रथाओं को ही अधिनियम की धारा 2(ओ) के आलोक में जांच की जाये कि क्या वे प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं के बराबर थे.....”

इसे पैराग्राफ 12 में पुनः स्पष्ट किया गया था।

“..... लेकिन तथ्य यह है कि एक बार जब आयोग संतुष्ट हो जाता है कि एक विशेष समझौता जो धारा 35 के तहत पंजीकृत नहीं किया गया है, धारा 33 की उप-धारा (1) के (क) से (ठ) तक के किसी भी खंड के अंतर्गत आता है, तो इसमें आगे कोई जांच नहीं की जानी है कि क्या ऐसा समझौता प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं से संबंधित है या नहीं। वैधानिक धारा 33 की उप-धारा (1) में शामिल कल्पना भी अधिनियम की धारा 48 के तहत प्रदान किया गया। ऐसे जुर्माने के अलावा ऐसे समझौतों के संबंध में लागू होगी। इस प्रकार जिन लोगों ने अपने समझौते पंजीकृत किए हैं और जिन्होंने अपने समझौतों को पंजीकृत नहीं कराया है, उनके मध्य भेदभाव की गुंजाइश नहीं है।

महिंद्रा एंड महिंद्रा लिमिटेड बनाम भारत संघ 1979 2 एस. सी. सी. 529 के मामले का उल्लेख करते हुए जिस पर वर्तमान मामले में अपीलार्थी के वकील द्वारा निर्भरता रखी गई है, का उल्लेख करते हुए, तीन न्यायाधीशों की पीठ ने वोल्टास मामले में

यह स्पष्ट कर दिया कि धारा 33 की उप-धारा (1) के मुख्य भाग में एक वैधानिक कल्पना की शुरुआत के साथ स्थिति बदल गई है।

धारा 33 की उप-धारा (1) के (क) से (ठ) तक प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं के वैधानिक चित्रण की प्रकृति के हैं। इस कठिनाई का सामना करते हुए, अपीलार्थी के विद्वान वकील ने इस तर्क पर जोर दिया कि खंड 7 की आपत्तिजनक प्रकृति आरोप और जांच का विषय नहीं थी और इसलिए आयोग द्वारा खंड 7 का संशोधन/हटाने के लिए कोई निर्देश नहीं दिया जाना चाहिए था, विशेष रूप से जब आरोप संख्या (ii) को कायम नहीं रखा गया है, हालांकि यह प्रशंसनीय है परन्तु हमें इस तर्क को स्वीकार करना मुश्किल लगता है।

हालांकि जांच के नोटिस में आयोग ने खंड 7 की अयोग्यता का उल्लेख करते हुए विशेष रूप से नहीं किया है, परन्तु हम आयोग के अभिवचनों और आदेश से पाते हैं कि यह मुद्दा विचार के लिए सामने आया था और पक्षों ने इस मुद्दे पर विस्तृत दलीलें दीं थीं। यहाँ यह ध्यान दिये जाने योग्य है कि प्रत्युत्तर में शिकायतकर्ता ने अनुच्छेद 5 के कथनों का उल्लेख करते हुए जवाब में, अपीलार्थी के इस कथन को चुनौती दी गई कि समझौते में प्रतिबंधात्मक प्रावधान थे जो 'विक्रेता की आवश्यकता को पूरा करने में कंपनी को मनमाना विवेकाधिकार देते हैं'।

यह अविवादित है कि इस पहलू पर भी तर्क दिया गया था। यह स्पष्ट है कि आयोग को शिकायत में उठाए गए बिंदुओं तक ही सीमित रहने की आवश्यकता नहीं है। अधिनियम की धारा 10 के तहत आयोग को अपने स्वयं के ज्ञान पर या जानकारी पर प्रतिबंधात्मक या एकाधिकारवादी व्यापार प्रथा किसी भी मामले की जांच करने की शक्ति दी गई है।

दूसरे शब्दों में, आयोग स्वतः संज्ञान लेते हुए ऐसी व्यापार प्रथाओं की जांच कर सकता है और आवश्यक अनुवर्ती कार्रवाई कर सकता है। इस संबंध में ज्ञान या जानकारी शिकायत याचिका, अभिवचन या मामले में प्रस्तुत सामग्री में प्रकट तथ्यों से भी प्राप्त की जा सकती है।

आयोग अपने कर्तव्य में विफल रहेगा यदि वह किसी शिकायत की जांच के दौरान उसके संज्ञान में आने वाली प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं पर ध्यान नहीं देता है। हमारे सुविचारित दृष्टिकोण में, एक औपचारिक कार्यवाही प्रारूपण का कोई मुद्दा या स्वतः संज्ञान लेने के मुद्दे को दर्ज करने में चूक स्वयं आयोग के निर्णय को दूषित नहीं करता है। हालाँकि, इस तरह की शक्ति के प्रयोग में यह निहित है कि प्रभावित पक्ष को उस बिंदु, जो स्वतः संज्ञान जांच का विषय है, को स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त अवसर दिया जाना चाहिए। शिकायतकर्ता द्वारा लगाए गए आरोपों की जांच हेतु आयोग के ज्ञान में आने वाले मामले की स्वतः संज्ञान जांच के संयोजन पर कोई रोक नहीं है। प्रक्रियात्मक दृष्टिकोण से आयोग द्वारा की

गई कार्रवाई की वैधता का परीक्षण करने में, न्यायालय का दृष्टिकोण ऐसा होना चाहिए कि अधिनियम के उद्देश्यों को बढ़ावा दिया जा सके। एक संकीर्ण या पांडित्यपूर्ण दृष्टिकोण को त्याग दिया जाना चाहिए। इस दृष्टिकोण से देखते हुए, हम यह मानने में असमर्थ हैं कि आयोग ने खंड 7 की वैधता का परीक्षण करने में अपनी सीमाओं का उल्लंघन किया है या कि अपीलार्थी समझौते के खंड 7 से संबंधित आरोप का निर्धारण न करने के कारण अपने मामले को स्पष्ट करने में बाधित था।

अगला सवाल यह है कि क्या समझौते की समाप्ति को देखते हुए, आयोग समझौते में प्रासंगिक खंड की वैधता की जांच करने से बाधित हुआ था। यह निर्विवादित है कि इस प्रकार का खंड विक्रेताओं के साथ किए गए सभी समझौतों में शामिल किया गया है। दूसरे शब्दों में, समझौता एक मानक रूप में है। आयोग के अनुसार, इस तथ्य के अलावा कि खंड 7 अपने आप में एक प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा है, इसमें भविष्य में प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं को जन्म देने की क्षमता है। इसलिए, आयोग ने धारा 37(1) के खंड (ख) के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए निर्देश दिया कि खंड को उपयुक्त रूप से संशोधित किया जाना चाहिए ताकि इसमें आपत्तिजनक तत्व को हटाया जा सके। तत्व संख्या 3 पर हमारे निर्णय को ध्यान में रखते हुए, आयोग के निर्देश को वर्तमान समझौते के संबंध में लागू नहीं किया जा सकता है। साथ ही, अपीलार्थी को

मानक प्रपत्र समझौते के खंड 7 में निहित अनुचित व्यापार प्रथा को कायम रखने की अनुमति नहीं दी जाएगी। अतः हम आयोग के आदेश में यह निर्देश देकर संशोधन करना उचित समझते हैं कि अपीलार्थी को प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा को निषिद्ध करने हेतु अपने विक्रेताओं के साथ सभी समझौतों में जहां खंड 7 या समान खंड आते हैं, में उपयुक्त संशोधन करने हेतु कदम उठाने चाहिए और तदनुसार आयोग को एक रिपोर्ट दाखिल करनी चाहिए।

री: तत्व संख्या 3 (समझौते की समाप्ति)

आरोप का अगला आधार आयोग के प्रतिबंध के आदेश पर हैं। जिसके अनुसार अपीलार्थी डीलरशिप की समाप्ति के पत्र पर कार्रवाई करने से और आगे फिलिप्स उत्पादों की आपूर्ति को कम से कम वर्ष 1986 में की गई आपूर्ति की सीमा तक निर्देशित किया गया था, यह तर्क दिया जाता है कि अनुबंध की समाप्ति के पश्चात् आयोग के पास अनुबंध को जीवित रखने की कोई शक्ति और क्षेत्राधिकार नहीं हैं। इस तर्क को पुष्ट करने के लिए, अपीलार्थी के विद्वान वकील ने विशिष्ट राहत अधिनियम की धारा 14 और 41 के प्रावधानों का उल्लेख किया है और तर्क दिया है कि अनुबंध, जो अपनी प्रकृति में समाप्त करने योग्य है, विनिर्दिष्ट रूप से लागू नहीं किया जा सकता है तथा अनुबंध के भंग होने के आधार पर कोई निषेधाज्ञा जारी नहीं की जा सकती हैं। समझौते के खंड 29 की ओर ध्यान

आकर्षित किया गया है जिसके तहत अनुबंध कथित रूप से समाप्त कर दिया गया है।

खंड 29 निम्नानुसार हैं - यह समझौता किसी भी पक्ष द्वारा अन्य पक्ष को 30 दिनों के नोटिस को लिखित रूप में देकर समाप्त किए जाने तक लागू रहेगा। इसके विपरीत, आर-2 के लिए विद्वान वकील का यह तर्क है कि समाप्ति प्रामाणिक नहीं थी, बल्कि यह केवल प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं को बनाए रखने के उद्देश्य से की गई थी, जिनके खिलाफ आर-2 हमेशा विरोध कर रहा था। यदि अपीलार्थी-कंपनी को लगता है कि आर-2 ने एक व्यापारी के रूप में कंपनी के हितों के विपरीत काम किया है या समझौते की किसी भी शर्त का उल्लंघन किया है, तो खंड 28 को लागू किया जाना चाहिए था और आर-2 को समाप्ति के कथित आधारों के संबंध में नोटिस से सूचित किया जाना चाहिए था। खंड 29 के तहत बर्खास्तगी का सहारा बाहरी कारणों से लिया गया था। इस तरह का आदेश पारित करने की आयोग की शक्ति के संबंध में, यह उल्लेखित है कि डीलरशिप की समाप्ति का आदेश अपीलार्थी की प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं के परिणामस्वरूप और सहायक थी। आर-2 के विद्वान वरिष्ठ वकील के अनुसार डीलरशिप की समाप्ति का अपीलार्थी द्वारा अपनाई गई प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं के साथ प्रत्यक्ष और अटूट संबंध था और ऐसी परिस्थितियों में आयोग अनुबंध और आपूर्ति की बहाली का निर्देश देने

के लिए अपनी शक्ति के अधीन था। आर-2 के विद्वान वकील के तर्क को स्वीकार करना हमें मुश्किल लगता है। आम तौर पर, आयोग को इस सवाल की जांच करने का अधिकार नहीं है कि क्या अनुबंध को एक खंड या समझौते के दूसरे खंड के तहत वैध रूप से समाप्त किया गया था। आयोग इस संबंध में दीवानी न्यायालय की भूमिका नहीं निभा सकता है। यह सत्य है, जैसा कि अपीलार्थी के विद्वान वकील ने तर्क दिया है कि आयोग के पास इस बात पर विचार करने की आनुषंगिक और सहायक शक्ति है कि क्या डीलरशिप की समाप्ति आपत्तिजनक व्यापार प्रथाओं को कायम रखने का एक उपकरण था तथा क्या इस तरह की समाप्ति प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा की निरंतरता के साथ निकटता से जुड़ी हुई है। लेकिन, हम इस संबंध में आयोग द्वारा एक विशिष्ट निष्कर्ष के लिए व्यर्थ खोज करते रहे हैं। आयोग ने यह नहीं माना कि खंड 29 के तहत समाप्ति जो निस्संदेह दोनों में से किसी पक्षकार को अधिकार देती है "समझौते के पक्षकार द्वारा 30 दिनों का नोटिस देकर इसे समाप्त करने से स्वयं ने प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं को बढ़ावा मिलेगा।"

खंड 29 प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं के साथ आगे बढ़ने के लिए खंड 28 को दरकिनार करने का एक कवच है। वास्तव में, आयोग के कुछ निष्कर्ष, जिन्हें हम पहले ही स्वीकार कर चुके हैं, इंगित करते हैं कि आर-2 द्वारा व्यवसाय करने के तरीके से असंतुष्ट महसूस करने का कुछ

औचित्य था। तथ्य यह भी है कि आर-2 द्वारा कथित अन्याय और भेदभावपूर्ण व्यवहार का विरोध करते हुए अपीलार्थी को लिखे गए कई पत्रों का अपीलार्थी ने कोई जवाब नहीं दिया। इस प्रकार, जब दोनों पक्षों के बारे में बहुत कुछ कहा जाना है, तो आयोग को ऊपर बताए गए आधार पर एक विशिष्ट निष्कर्ष दर्ज करना चाहिए था। इस बात का कोई कारण नहीं दिया गया है कि समझौते के तहत आरक्षित अधिकार का प्रयोग करते हुए जिस अनुबंध को समाप्त कर दिया गया था, उसे क्यों पुनर्जीवित किया जाना चाहिए। जाहिर है, इस प्रकृति के निर्देश शिकायतकर्ता को नुकसान की क्षतिपूर्ति करने की दृष्टि से नहीं दिया जा सकता है। जहाँ तक नुकसान के मुआवजे का संबंध है, यह धारा 12ए लागू होती है और उस प्रावधान के तहत पहले ही एक आवेदन दायर किया जा चुका है। बेशक, यह आयोग के लिए खुला है कि वह उस आवेदन पर उपयुक्त आदेश पारित करे; लेकिन, समाप्ति पत्र को प्रभावी नहीं करने का निर्देश, जिससे अनुबंध को पुनर्जीवित किया जा सके, स्पष्ट रूप से शक्तियों से परे है, विशेष रूप से इस कारण से कि आयोग ने यह निष्कर्ष दर्ज नहीं किया कि अनुबंध की समाप्ति अधिनियम के प्रावधानों के तहत थी और इसका उपयोग केवल प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं को बनाए रखने के लिए किया गया था। नतीजतन, फिलिप्स उत्पादों की आपूर्ति फिर से शुरू करने का निर्देश भी उतना ही अपोषणीय है।

री: तर्क सं. 4 (विराम और निषेध आदेश की वैधता)

यह तर्क दिया गया है कि धारा 37(ए) के तहत संघर्ष विराम आदेश पारित नहीं किया जाना चाहिए था जब तक कि आयोग यह नहीं पाता कि प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा लोक हित के लिए प्रतिकूल है। धारा 38(1)(एच) के आधार पर, प्रतिबंधात्मक व्यापार अभ्यास को सार्वजनिक हित के विपरीत नहीं माना जाएगा यदि प्रतिबंधात्मक व्यापार अभ्यास प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संबंधित व्यापार या उद्योग में किसी भी भौतिक स्तर तक प्रतिस्पर्धा को प्रतिबंधित या हतोत्साहित नहीं करता है और ऐसा करने की संभावना नहीं है। यह तर्क दिया जाता है कि एकल विक्रेता-आर-2 पर लगाए गए कथित प्रतिबंध किसी भी उचित स्थिति तक प्रतिस्पर्धा को प्रभावित नहीं कर सकते हैं, विशेष रूप से तब जब ऑडियो उत्पाद कम आपूर्ति वाले आइटम न हों। दूसरी ओर दूसरे प्रत्यर्थी के विद्वत् वकील द्वारा यह तर्क दिया गया है कि धारा 38 के तहत एक धारणा है कि एक प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा सार्वजनिक हित के लिए प्रतिकूल है और इसलिए अपीलार्थी पर धारा 38(1) के खंड(एच) के तहत मामला साबित करने का भार है और अपीलार्थी द्वारा इस भार का निस्तारण नहीं किया गया है। इसके अलावा, यह स्पष्ट किया जाता है कि आयोग द्वारा इस संबंध में एक विशिष्ट निष्कर्ष है कि खंड(ज) का सहारा लेकर अपीलार्थी द्वारा जिस मुख्य मार्ग का निवेदन किया गया है, वह पोषणीय नहीं है।

यह उल्लेखनीय हैं कि आयोग ने कुछ कारण दिए हैं जैसे कि ग्वालियर में व्यापार परिदृश्य और उन कारणों को अप्रासंगिक नहीं कहा जा सकता है। यद्यपि प्रतिवादी के वकील के तर्क में काफी बल है तथा हमारे निष्कर्षानुसार इस संबंध में राय व्यक्त करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि आरोप संख्या 3 द्वारा में वर्णित किये गये आदेश जिसके द्वारा प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा को बंद करने का आदेश पारित किया था, अनुचित हो जाता। जिस डीलरशिप समझौते को समाप्त कर दिया गया है, उसे इस स्तर पर पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त यह प्रश्न क्या खंड 37(1)(ए) के तहत संघर्ष विराम आदेश को प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा के संबंध में पारित किया जा सकता है, अकादमिक बन जाता है क्योंकि यह अपीलार्थी के खिलाफ साबित हुआ।

हम जिन निष्कर्षों पर पहुंचे हैं, उनका सारांश इस प्रकार है:

1. आरोप सं. III पर न्यायाधिकरण के निष्कर्ष को बरकरार रखा गया है।
2. आरोप संख्या V के संबंध में निष्कर्ष पोषणीय नहीं है।
3. आयोग का यह अभिनिर्धारण न्यायोचित है कि M.R.T.P. अधिनियम की धारा 33 (1) का खंड (जी) के तहत समझौते का खंड 7 एक प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा है। प्रतिस्पर्धा को विकृत या सीमित करने का प्रभाव रखता है। आयोग द्वारा खंड 7 में उपयुक्त रूप से संशोधन

करने का निर्देश सही है। अपीलार्थी और आर-2 के बीच समझौते की समाप्ति के होते हुए अपीलार्थी को अन्य डीलरों के साथ इसी प्रकृति के समझौते में विद्यमान समान खंड में संशोधन करने के लिए कदम उठाने चाहिए।

4. आयोग ने निर्देश देने में अपने क्षेत्राधिकार से परे आदेश दिया है कि समझौते को समाप्त करने वाले पत्र को प्रभावी नहीं किया जाये व शिकायतकर्ता को आपूर्ति बहाल करें। आयोग द्वारा इस निष्कर्ष के अभाव में कि समाप्ति समझौता अधिनियम के प्रावधानों के विपरीत हैं या यह एक अधिनियम के प्रावधानों को दरकिनार करने के लिए उपकरण हैं। ताकि प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा को स्थायी किया जा सके, के निर्देश के अभाव में ऐसे आदेश पोषणीय नहीं हैं।

5. धारा 37(1)(ए) के तहत पारित संघर्ष विराम आदेश समझौता समाप्त होने से अक्षम और निष्क्रिय हो जाता है। शिकायतकर्ता आर-2 का उपाय है कि वह धारा 12-ख के आरोप संख्या 3 के तहत प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथा के कारण उसे जो नुकसान उठाना पड़ा है, उसके मुआवजे के लिए अपने दावे को आगे बढ़ाता रहे।

अपील का बिना किसी खर्च के आदेश के निस्तारण किया जाता है।

अपील का निस्तारण किया गया।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी डिम्पल जन्डेल (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।